5. माँग, पूर्ति, कीमत और वितरण

वस्तुः वस्तु का आशय बाजार में बिक्री के लिए उत्पादित की जाने वाली चीज से है इस परिभाषा के अनुसार परिवार में उपभोग के लिए बनायी गयी सब्जी वस्तु नहीं है लेकिन होटल पर पहुँचने पर यही सब्जी वस्तु है,

बाजारः अर्थशास्त्र में बाजार से आशय सिर्फ भौगोलिक क्षेत्र या मंडी से नहीं है जहाँ पर वस्तुएं खरीदी या बेची जाती हैं, बाजार का आशय उस सारे क्षेत्र से है जिसमें वस्तु की खरीद बिक्री हेतु क्रेत व विक्रेता निरंतर सम्पर्क में लगे रहते हैं। इस प्रकार किसी एक वस्तु का स्थानीय बाजार (Local market), क्षेत्रीय बाजार (regional market) राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय बाजार हो सकता हैं।

माँगः किसी भी बाजार में एक वस्तु के बहुत से खरीददार हो सकते हैं चूंकि उपभोग की मूल ईकाई परिवार होती है अतः वस्तु की मॉग को हम अधोलिखित रूप में परिभाषित कर सकते हैं: "समय एवं कीमत विशेष पर उपभोक्ता बाजार से जो वस्तु खरीदने के लिए तैयार है उसी को वस्तु की माँग कहतें हैं।"

वस्तु की माँग या परिवार की माँग 4 कारकों पर निर्भर करती है-

- परिवार की मांग
- रूचि एवं अधिमान
- अन्य वस्तुओं की कीमतें।
- वस्तु की कीमत और उसकी माँग।

परिवार की आय और माँग एक दिशा में चलते हैं अर्थात् आय बढ़ने के साथ-साथ माँग बढ़ती जाती हैं किन्तु कुछ मामलें में आय वृद्धि की माँग पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जैसे-नमक। किन्तु कभी-कभी आय बढ़ने के साथ-साथ वस्तुओं की माँग घट भी जाती है जैसे- टोन्ड दूध।(इसी को घटिया वस्तुयें भी कहतें हैं।)

परिवार की रूचि और अधिमान भी वस्तु की माँग को प्रभावित करते हैं अगर रूचि व अधिमान किसी वस्तु के सापेक्ष है तो वस्तु की माँग बढ़ती जायेगी एक तथ्य यह भी है कि विज्ञापन और फैशन की दुनिया भी वस्तु की माँग को प्रभावित करती है।

अन्य वस्तुओं की कीमतों के सोपक्ष भी वस्तु की माँग प्रभावित होती है शर्त है ऐसी वस्तुएँ प्रतिस्थायी होनी चाहिए जैसे चाय व कॉफी प्रतिस्थायी वस्तुएं हैं। यहाँ पर जिसकी कीमत कम होगी उसकी माँग बढ़ जायेगी।

यदि कारक अपरिवर्तित रहें तो वस्तु की माँग की मात्रा उसकी कीमत के प्रतिलोमनुसार होती है।

बाजार की माँगः बाजार की माँग दो तथ्यों पर आधारित होती है-

- बाजार में परिवारों की संख्या।
- आय का वर्गीकरण।

1. **बाजार में परिवारों की संख्या** - अधिक जनसंख्या का अभिप्राय है अधिक परिवारों की संख्या व अधिक वस्तुओं की माँग। इसी प्रकार जनसंख्या का समायोजन (आयु वितरण) भी बाजार की माँग को प्रभावित करती है। आयु का समायोजन इस प्रकार हो सकता है- 0-5 वर्ष, 15-35 वर्ष, 35-50वर्ष तथा 50 वर्ष से अधिक।
2. **आय का वर्गीकरणः** बाजार की माँग केवल आय पर ही निर्भर नहीं करती बल्कि आय वितरण पर भी निर्भर करती है। एक तेल उत्पादक अमीर देश में प्रति व्यक्ति आय ऊंची हो सकती है लेकिन वहाँ पर आय का वितरण असमान है। इस कारण वहाँ पर बाजार की माँग उन देशों के सापेक्ष नीची होगी जहाँ आय का वितरण समान होगा।

- **माँग की लोचः** माँग की लोच कीमत में परिवर्तन होने पर माँग की प्रतिक्रिया की मात्रा है अथवा परिवर्तित कीमत पर माँग की अनुक्रिया माँग की लोच कहलाती है। कीमत और माँग की लोच की दिशा उल्टी होती है।

नियम : कीमत माँग की लोच

पूर्तिः किसी विक्रेता विशेष या फर्म द्वारा पूर्ति का अर्थ है किसी वस्तु की वह मात्रा जिसे वह एक विशेष समय पर विशेष कीमत पर बाजार में बेचने के लिए तैयार है। किसी फर्म में अधोलिखित उद्देश्य हैं-

- अपने लाभ को अधिकतम बनाना।
- बिक्री को अधिकतम बनाना।
- बाजार के अधिकतम भाग को हथियाना।
- समाज को इच्छित वस्तुओं का उत्पादन और अधिकतम रोजगार का सृजन।

नोटः उत्पादक के उद्देश्य में परिवर्तन (अनुकूल या प्रतिकूल) का प्रभाव वस्तु की पूर्ति पर पड़ सकता है।

पूर्ति को अधोलिखित कारक प्रभावित कर सकते हैं:

- **सभी अन्य वस्तुओं की कीमतेंः** किसी वस्तु की पूर्ति अन्य सभी वस्तुओं की कीमतों पर निर्भर करती है क्योंकि यदि दूसरी वस्तुओं की कीमतें बढ़ जायें तो उसका उत्पादन बेहतर माना जायेगा और जिनकी कीमतें नहीं बढ़ी हैं वे कम आकर्षक होंगी और बाजार में उसकी पूर्ति कम हो जायेगी।
- **उत्पादन साधनों की कीमतेंः** किसी एक साधन का यदि अलग-अलग वस्तुओं के उत्पादन में प्रयोग होता हो, दोनों वस्तुयें एक ही अर्थ के लिये हों लेकिन एक में उस साधन

का कम प्रयोग होता हो और एक में ज्यादा उसी समय यदि उस साधन की कीमत बढ़ जाये तो जिसमें उस साधन की उपयोग कम हो रहा है उसकी लागत कम हो जायेगी अत: उसका उत्पादन सस्ता होने के कारण लाभ बढ़ जायेगा जबकि जिसमें वह साधन ज्यादा प्रयोग हो रहा हो उसकी उत्पादन लागत बढ़ जायेगी अत: लागत में वृद्धि के कारण लाभ कम हो जायेगा। स्वाभावत: ज्यादा लाभप्रद वस्तु की पूर्ति बढ़ जायेगी।

पूर्ति की क्रिया: किसी वस्तु की पूर्ति में मात्रा परिवर्तन उसके कीमत के अनुरूप होता है। अर्थात् दोनों चर एकसाथ चलते हैं।

पूर्ति की लोच: यह वस्तु की कीमत में परिवर्तन की दिशा में उसकी पूर्ति की अनुक्रिया का सम्बंध है अर्थात् परिवर्तित कीमत पर पूर्ति की अनुक्रिया पूर्ति की लोच कहलाती है, साधारण शब्दों में कहें तो बढ़ती कीमत पर पूर्ति बढ़ जाती है जबकि घटी हुई कीमत पर पूर्ति कम हो जाती है।

पूर्ति के संदर्भ में:

पूर्ति वक्र की ढाल = सकारात्मक

पूर्ति वृद्धि का अर्थ है = पूर्ति वक्र का नीचे की ओर उठना (बाँयी ओर)

पूर्ति में कमी = पूर्ति वक्र का ऊपर की ओर खिसकना (दाँयी ओर)

संतुलन कीमत वह कीमत है जिस पर कीमत निर्धारित करने वाली शक्तियाँ संतुलन में होती हैं। बाजार में किसी वस्तु की कीमत निर्धारित करने वाली माँग व पूर्ति नामक दो शक्तियाँ हैं। यदि माँग व पूर्ति के अन्य कारक अपरिवर्तित रहें तो माँग व पूर्ति दोनों ही कीमत के प्रतिफल हैं इसे यूँ भी कह सकते हैं कि माँग व पूर्ति की अनुक्रिया द्वारा ही कीमत का निर्धारण होता है।

माँग के संदर्भ में कम कीमत पर या कीमत घटने पर माँग बढ़ती है और अधिक कीमत या कीमत बढ़ने पर माँग घट जाती है। पूर्ति के संदर्भ में ऊँची कीमत पर पूर्ति बढ़ जाती है क्योंकि लाभ की प्रेरणा ज्यादा होती है जबकि कम कीमत पर पूर्ति कम हो जाती है सीधी सी बात व्यवसायी घाटे में रहते थे। सामान्तय: माँग वक्र की ढाल ऋणात्मक होगी जबकि पूर्ति वक्र की ढाल सकारात्मक होगी।

पूर्ति माँग से ज्यादा होने पर पूर्ति करने वालों की होड़ के कारण कीमत कम हो जायेगी जबकि कम कीमत पर पूर्ति कम जो जायेगी लेकिन इसी समय माँग बढ़ती रहेगी जब तक कि कीमत संतुलित न हो जाये यहीं पर संतुलित कीमत की अवधारणा सामने आती है।

प्रो. मार्शल माँग व पूर्ति की तुलना कैंची के दो फलकों से करते हैं उनकी दृष्टि में जैसे कैंची का एक फलक कपड़ा नहीं काट सकता उसी तरह माँग या पूर्ति अकेले कीमत पर निर्णय नहीं कर सकती। दोनों की पारस्परिक अनुक्रियाएं ही कीमत पर निर्णय कर सकेंगी।

माँग, पूर्ति तथा संतुलन कीमत में परिवर्तन: माँग में वृद्धि का अर्थ है माँग वक्र का ऊपर की ओर (दायीं ओर) उठना और मांग में कमी का अर्थ है माँग वक्र का नीचे की ओर खिसकना। बाँयी ओर)। जबकि पूर्ति में वृद्धि का अर्थ है पूर्ति वक्र का नीचे की ओर खिसकना (दायीं ओर) तथा पूर्ति में कमी का अर्थ है पूर्ति वक्र का ऊपर की ओर (बाँयी ओर) खिसकना।

माँग, पूर्ति और विश्लेषण के कुछ उपयोग: स्वतंत्र रूप से काम कर रहे बाजार में माँग व पूर्ति की क्रिया बेरोकटोक चलती रहती है। लेकिन युद्ध और शांति दोनों समयों में सरकार वस्तुएं एवं सेवाओं की अधिकतम कीमत की सीमा निर्धारित कर देती है। माना यह कीमत 5 रू/ किग्रा. है।

कल्याणकारी अवधारणा के पोषण में यदि सरकार चीनी की कीमत 4 रू/किग्रा. कर देती है तो इस माँग पर चीनी की कमी हो जायेगी कारण ऐसी स्थितियों में लाभ की प्रेरणा की कमी के कारण व्यापारी चीनी की आपूर्ति कम कर देते हैं जबकि जनता की माँग बढ़ती जाती है। इसी समय यदि कीमत नियंत्रित करने वाले अभिकरण तथा व्यापारी ईमानदारी से काम न करें तो वस्तुओं की कालाबाजारी शुरू हो जाती है और यहीं से काली अथवा समानान्तर अर्थव्यवस्था का जन्म होता हैं।

यदि सरकार कीमतें बढ़ा दे (6 रू/किग्रा.) तो आपूर्ति तो बढ़ेगी लेकिन माँग कम हो जायेगी।

इन स्थितियों से बचने के लिए ही सरकार दोहरी कीमत पद्धति अपनाती है एक तरफ प्रशासित मूल्य (कोटा लाइसेंसिग प्रणाली) के तहत आम जन के लिए चीनी उपलब्ध होती है दूसरी तरफ स्वतंत्र बाजार दर पर जन के लिए चीनी उपलब्ध होती है।

अधिक कीमत अथवा अति उत्पादन की स्थिति में सरकार के दायित्व और अधिक गहरे हो जाते हैं जो दो रूपों में दृष्टिगोचर होता हैं:

1. व्यापारियों के संबंध में यदि कीमतें बढ़ेंगी तो पूर्ति स्वाभावत: बढ़ जायेगी लेकिन माँग की कमी होने के कारण अंतत: कीमतें गिरने लगेंगी व्यापारी हानि में आयेंगे अत: सरकार अतिरिक्त उत्पाद खरीदने के लिए बाध्यकर रहती है क्योंकि गिरती कीमतें देश की साख के लिये उचित नहीं होती।

इसी प्रकार किसानों के संदर्भ में अति उत्पादन के समय सरकार न्यूनतम समर्थन मूल्य पर अधिशेष को खरीद लेती है ताकि किसानों के हित सुरक्षित बने रहें ऐसे अधिशेष को सरकार बफर स्टॉक के रूप में सँजोकर रखती है। जिसके तिहरे उपयोग हो सकते हैं:

1. प्राकृतिक आपदा के समय स्वदेश या विदेश में उपयोग।
2. यदि अभी भी अधिशेष बचा हुआ हो तो कीमत न गिरने देने के लिए उसे सागर में फेंक दिया जाता है।

वितरण : सामान्यतया वस्तु एवं सेवाओं को बाँटने की क्रिया वितरण कहलाती है। अर्थशास्त्रीय भाषा में उत्पादन के विभिन्न साधनों (भूमि, श्रम, पूँजी, उद्यम) द्वारा उत्पादित धन का पुन: उन्हीं साधनों में बँटवारा वितरण कहलाती है।

जिस प्रकार वस्तु की कीमत माँग व पूर्ति से सुनिश्चित होती है उसी प्रकार साधनों की कीमत भी पूर्ति की अनुक्रिया द्वारा तय होती है। अत: साधनों की कीमत निर्धारणर की प्रक्रिया ठीक वैसी ही है जैसी वस्तुओं के कीमत निर्धारण की प्रक्रिया होती हैं

सारंशत : अर्थव्यवस्था में उत्पादन प्राथमिक प्रत्यय है किन्तु वितरण उससे भी महत्वपूर्ण है अत: अर्थव्यवस्था में वितरण एक मौलिक समस्या है। वस्तुत: यह समस्या उस उत्पाद से संबद्ध है जिसका विवरण किय जाना है। उत्पाद को अधोलिखित रीति से परिभाषित किया जा सकता है:

1. उत्पाद उन विभिन्न साधनों की आगत का फल है जिसे न्यूनतम लागत समायोजन और अधिकतम लाभ के सिद्धांतों के अनुसार विशेष अनुपात में संयोजित किया जाता हैं।
2. साधन सामान्यत: सुविधाजनक रूप में 4 शीर्षकों में बाँटा जा सकता हैं:

1. भूमि
2. श्रम
3. पूँजी
4. उद्यम

1. भूमि: देश की भूमि का कुल क्षेत्र उपजाऊ भूमि की पूर्ति तथा अन्य प्राकृतिक संसाधनों को हम भूमि के रूप में समझ सकते हैं।

भूमि चल है या अचल: प्रथम दृष्टया भूमि अचल है तथ्य है कि जब भूमि का अर्थ हम प्राकृतिक संसाधनों के रूप में लेते हैं तो भूमि अचल सिद्ध होती हैं। किन्तु जब भूमि का अर्थ उपजाऊ अर्थ में लिया जाता है तो इसे चल संपदा कहते हैं। बेहतर जल निकासी, सिंचाई उर्वरक, उन्नत बीज आदि का प्रयोग करके भूमि को चल बनाया जा सकता है किन्तु प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन चल संपत्ति की अवधारणा को नकारात्मक प्रत्यय में बदल सकता है। भारत समेत दुनिया के जंगलों की घटती संख्या, जंगली जानवरों, मछलियों की घटती प्रजातियाँ, मरूस्थलीकरण, जमीन का रंग बंजर होते जाना तथा प्रदूषण ऐसी ही प्रवृत्ति के उदाहरण हैं।

2. श्रम: अर्थव्यवस्था में कुल श्रम की पूर्ति का अर्थ है वह कुल श्रमक जिनकी पूर्ति करने को जनसंख्या तैयार है यह 4 तथ्यों पर निर्भर करती है:

1. कुल जनसंख्या परिमाण।
2. जनसंख्या का वह भाग जो कार्य हेतु उपलब्ध है।
3. कार्य करने के घंटे।
4. किया गया कुल वास्तविक कार्य।

श्रम शक्ति पर इसकी माँग की प्रतिक्रिया होती है। जिस श्रम की गुणवत्ता और उपयोगिता ज्यादा होगी ऐसे श्रम की माँग भी ज्यादा होगी। खास परिस्थिति में औरत, बूढ़े और बच्चे उस जलाश्य की तरह व्यवहार करते हैं जो कि खास समय पर काम आय।

लेकिन समय गुजरने के साथ-साथ प्रति व्यक्ति के काम करने के घंटे कम होते गये और उन घंटों में वास्तविक कार्य भी नहीं हुआ जिससे उत्पादन में कमी आयी।

इसी क्रम में मजदूरी और रोजगार कें संदर्भो को भी देखा जा सकता है तथ्य है कि मजदूरी और रोजगार में उल्टा संबंध होता है। मजदूरी बढ़ने पर रोजगार के अवसर क्षीण होते हैं। इसे निजीकरण की अर्थव्यवस्था तथा 5वें वेतन आयोग द्वारा बेहतर ढंग से समझाया जा सकता है।

3. पूँजी (Capital): पूँजी मानव निर्मित साधन है। यह मशीनों, कारखानों और अन्य सामग्रियों से सबंद्ध रखता हैं। मशानों आदि की घिसावट से पूंजी का क्षय भी हो होता है लेकिन इसे हम हर वर्ष नये स्टाँकक के रूप में जोड़ते हैं।

ब्याज: ब्याज को पूँजी साधन की कमाई समझा जा सकता है।

लाभ: बाजार अर्थव्यवस्था में स्वतंत्र उद्यम का अनिवार्य अंग हैं प्रेरण व संकेत दोनों। साधनों आवंटन एवं इसकी कुशलता जैसे मूल प्रश्नों का हल लाभ की कसौटी पर ही होता है। प्रतिस्पर्धा लाभ को कम करती है **जबकि एकाधिकार इसे बढ़ाता है या चिरस्थायी बनाने का प्रयत्न करता है**। बचत के रूप में लाभ सभी अर्थव्यवस्थाओं में मिलता है यह समाजवादी अर्थव्यवस्था में उतना ही सार्थक है जितना पूँजीवाद। मुख्य अंतर यह है कि मूलत: पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में यह लाभ सार्वजनिक प्रतिफल के रूप में निजी व्यक्तियों को मिलता है। जबकि समाजवादी अर्थव्यवस्था में यह लाभ निजी व्यक्तियों को न मिलकर राज्य को मिलता हैं।

वितरण के अधोलिखित सिद्धांत है:

1. वितरण का प्रतिष्ठित सिद्धांत: एडम स्मिथ तथा मार्शल तथा डेविड रिकार्डो द्वारा समर्तित।
   (i) सीमान्त उत्पादकता का सिद्धांत (Marginal productivity theory) क्लार्क, वालस द्वारा समर्थित।
   (ii) वितरण का आधुनिक सिद्धांत (Modern theory of distribution)

1. वितरण का प्रतिष्ठित सिद्धांत: वितरण का प्रतिष्ठित सिद्धांत अर्थव्यवस्था में वितरण का परंपरागत सिद्धांत है इसके प्रतिपादक एडम स्मिथ हैं इस सिद्धांत के अनुसार कोई भी प्रतिफल या उत्पाद कुछ संसाधनों की समन्वित अतंक्रिया का परिणाम होता हैं। इस प्रकार से बने उत्पाद का मौद्रिक मूल्य निकालकर शर्तो योग्यताओं तथा माँग के अनुसार उन्हीं साधनों पर बाँट दिया जाता है। यहाँ पर भूमि के लिए भूमिपति के लगान, श्रमिक को मजदूरी, पूंजीपति को ब्याज तथा उद्यमी को लाभ मिल जाता है।

2. **सीमान्त उत्पादकता का सिद्धांत:** 19वीं सदी के अंत में प्रतिपादित यह सिद्धांत जे.बी. क्लार्क, विक्सटीड और वालरस ने दिया। इस सिद्धांत के तीन प्रमुख प्रत्यय है:

   1. सीमान्त उत्पादकता,
   2. सीमान्त आगम
   3. सीमान्त भौतिक अत्पादकता

1. **सीमान्त उत्पादकता:** उत्पादन में सहायक सभी साधनों पर अंतिम उत्पादन का शुद्ध मौद्रिक मूल्य सीमान्त उत्पादकत कहलाता है।

2. **सीमान्त आगम:** अन्य कारक अपरिवर्तित रख कर किसी एक कारक के प्रभाव में बढ़ी आय सीमान्त आगम कहलाती है।

3. **सीमान्त भौतिक उत्पादकता:** अन्य कारक अपरिवर्तित रखकर किसी एक कारम में वृद्धि से उत्पन्न हुए सम्पूर्ण क प्रतिफल को सीमान्त भौतिक उत्पादकता कहते हैं। किन्तु इस प्रकार के उत्पादन के कुछ सीमाएँ हैं।

तथ्य है कि उत्पत्ति इस नियम के अनुसरण में यदि हम एक कारक ही बनते हैं तो एक सीमा तक तो उत्पादन बढ़ता है लेकिन इसके बाद उत्पादन कम होने लगता है इस तरह से उल्टे यू ( )के आकार का वक्र बनता है जिसे M.P.P. वक्र कहते हैं।

Note: वस्तुत: उपरोक्त दोनों सिद्धांतों में परंपरा व आधुनिकता तथा स्थूल एवं सूक्ष्म विश्लेषण क अंतर मात्र है जहाँ पर साध नों की माँग व गुणवत्ता विशेष ध्यान क्षेत्र में होगी।

3. **वितरण का आधुनिक सिद्धांत:**

(i) उत्पत्ति की सभी इकाईयाँ अनुरूप होती हैं साथ ही साथ विभाजनीय के अतिरिक्त पूर्णत: प्रतिस्थापन योग्य होती है।

(ii) वितरण का प्रतिष्ठित सिद्धांत को मात्रात्मक एवं गुणात्मक रूप में और बेहतर करने की सोचता है ताकि संसाधनों को और ऊँची कीमत मिल सके।